B.A. Part - I
Philosophy Paper - II

Dr. Ragini Kumari
Associate Prof. & Head
P.G. Centre of Philosophy
Maharaja College, Ara

ज्ञानमीमांसीय सिद्धान्त के रूप में 'प्रत्ययवाद' की विवेचना

"विश्व के वस्तुओं की स्थिति के सम्बन्ध में दार्शनिकों ने एक मूल प्रश्न उठाया है कि क्या विश्व की वस्तुएँ अपने अस्तित्व के लिए हमारे देखे जाने के ऊपर निर्भर करती है या उसी हमसे स्वतन्त्र अस्तित्व है। इस प्रश्न के दो जवाब आए हैं। पहला जवाब के अनुसार विश्व की वस्तुएँ अपने अस्तित्व के लिए हमारे देखे जाने के ऊपर निर्भर नहीं करती, बल्कि उनका हमसे स्वतन्त्र अस्तित्व है। इस प्रकार के सिद्धान्त को वस्तुवाद या यथार्थवाद कहा जाता है। इसके विपरीत दूसरे जवाब के अनुसार विश्व की वस्तुएँ अपने अस्तित्व के लिए हमारे देखे जाने के ऊपर निर्भर करते हैं, इस प्रकार के सिद्धान्त को ज्ञान-शास्त्रीय प्रत्ययवाद कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार ज्ञेय ज्ञाता पर निर्भर या आधारित है। अतः ज्ञान-शास्त्रीय प्रत्ययवाद तत्त्वशास्त्रीय प्रत्ययवाद से भिन्न इस माने में है कि तत्त्वशास्त्रीय प्रत्ययवाद मूल तत्त्व की प्रकृति विषयक प्रश्न का एक उत्तर है जबकि ज्ञान-शास्त्रीय प्रत्ययवाद ज्ञाता और ज्ञेय के सम्बन्ध विषयक प्रश्न का उत्तर है। तत्त्वशास्त्रीय प्रत्ययवाद से ज्ञान-शास्त्रीय प्रत्ययवाद का सम्बन्ध ऐसा है कि ज्ञान-शास्त्रीय प्रत्ययवाद को स्वीकार करने पर तत्त्वशास्त्रीय प्रत्ययवाद को स्वीकार करना अनिवार्य है किन्तु तत्त्वशास्त्रीय प्रत्ययवाद को स्वीकार करने पर ज्ञान-शास्त्रीय प्रत्ययवाद को स्वीकार करना अनिवार्य नहीं है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ज्ञान-शास्त्रीय प्रत्ययवाद के अनुसार ज्ञाता और ज्ञेय में ऐसा सम्बन्ध है कि ज्ञाता से स्वतन्त्र या असम्बद्ध होने पर ज्ञेय का अस्तित्व कायम नहीं रह सकता।

Scanned with CamScanner

क्योंकि ज्ञाता से स्वतन्त्र होने पर ज्ञेय का ज्ञान सम्भव नहीं है। इस सिद्धान्त की मान्यता है कि ज्ञान परभार्य है। इसका अर्थ है कि ज्ञान की परिधि को पार करना सम्भव नहीं है, इसलिए हम जो भी कथन करेंगे उसकी सीमा के अन्दर ही करेंगे फलस्वरूप अज्ञात और अज्ञेय के विषय में किसी प्रकार की चर्चा सम्भव नहीं है क्योंकि ज्ञेय सदा ज्ञाता से सम्बन्धित रहता है जिसका प्रमाण अनुभव है। हमें किसी भी प्रकार का ज्ञान या अनुभव ज्ञाता से सम्बन्धित करके ही होता है। ज्ञाता से असम्बद्ध पदार्थ से कभी आप सम्पर्क नहीं होता। अतः ज्ञाता से पदार्थों की स्वतन्त्रता या सम्बन्ध-हीनता असत्य है, क्योंकि उसका ज्ञान कभी भी सम्भव नहीं होगा और जिसका ज्ञान सम्भव नहीं है उसे सत्य भी नहीं माना जा सकता, क्योंकि ज्ञान ही हमारी सीमा है।

प्रत्ययवाद का सर्वप्रथम स्पष्ट उदाहरण बर्कले के दर्शन में मिलता है। बर्कले अनुभववादी दार्शनिक हैं अतः इनके अनुसार अनुभव ही ज्ञान का साधन है। बर्कले के अनुसार हमें अनुभव सिर्फ गुण का होता है, गुणों के अतिरिक्त किसी और पदार्थ या गुणों के आश्रय का नहीं होता। अतः सभी पदार्थ गुणों के समूह मात्र है, क्योंकि किसी भी पदार्थ में ~~हम~~ गुणों के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं पाते। उदाहरण के लिए सेव कई गुणों के मेल से बना है, जैसे उसकी मिठास चिकनाहट और गंध आदि। इन गुणों को यदि सेव से हटा दिया जाय तो सेव का अस्तित्व नहीं रहेगा, लेकिन सेव के ये सारे गुण हमारे देखने के ऊपर निर्भर करते हैं।

जो वस्तुएँ जानने योग्य होती हैं उन्हें मानसिक कहा जाता है। दुनियाँ की वस्तुएँ मानसिक कही जाती है। वे हमारे मन पर निर्भर करती है। संसार की समस्त वस्तुएँ चूँकि इस तर्क के अनुसार मानसिक है इसलिए ये सभी हमारे विचार करने के ऊपर निर्भर करती है। बर्कले ने अपनी इस मान्यता को अपनी प्रसिद्ध उक्ति esse est percipi के द्वारा व्यक्त किया है जिसका अर्थ होता है "Existence is perception" यानि विश्व के सभी पदार्थ किसी अनुभवकर्ता पर

निर्भर है। अतः बर्कले के अनुसार —

"..... all the chair of heaven and furniture of the earth, in a word, all the bodies which compose the mighty frame of the world, have not any subsistance without a mind ....." (Berkeley, Principles of Knowledge, Part I Section 4)

हम पाते हैं कि पश्चिमी प्रत्ययवादी के रूप में बीसवीं सदी में T.H. Green, Edward caired F.H. Bradley, Joachim आदि विचारकों की प्रगति हुई। इन प्रत्ययवादियों की भी यही मान्यता है कि ज्ञाता से अलग या स्वतन्त्र करके किसी पदार्थ का अस्तित्व कायम नहीं रखा जा सकता है। अतः वे कहते हैं कि विश्व के सभी पदार्थ ज्ञातृ सापेक्ष है। अपने विचार की पुष्टि हेतु इन्होंने कई तर्क दिये हैं जो निम्न प्रकार हैं —

(1) उनका पहला तर्क अन्तरंग सम्बन्ध (Theory of Internal relation) पर आधारित है। वे मानते हैं कि सभी सम्बन्ध अंतरंग है। अंतरंग सम्बन्ध उसे कहते हैं जिससे सम्बन्धित पदें एक दूसरे पर निर्भर करता है। अगर ऐसा नहीं माना जाय तो अनावस्था दोष उत्पन्न होगा। अतः सभी सम्बन्धित पद अपने अस्तित्व के लिए सम्बन्ध पर निर्भर करते हैं, सम्बन्ध से स्वतन्त्र उनका अस्तित्व नहीं है। ज्ञाता ज्ञेय का सम्बन्ध भी एक सम्बन्ध है और इसलिए पद भी आन्तरिक है।

(2) अपने दूसरे तर्क में अनुभव की सापेक्षता से अपने मत की पुष्टि करते हैं। इस सापेक्ष का मतलब है कि अनुभवकर्ताओं में भिन्नता होने पर पदार्थों का अनुभव भिन्न रूप में होता है। प्रत्ययवादी विचारक मानते हैं कि एक ही चीज किसी के लिए कम मीठी और किसी के लिए अधिक मीठी होती है। उसी प्रकार एक ही पदार्थ किसी को कम गर्म और किसी को अधिक गर्म मालूम पड़ता है। एक ही दूरी, किसी को बहुत अधिक और किसी को बहुत कम मालूम पड़ता है। अतः इन बातों से स्पष्ट होता है कि वस्तुओं का अस्तित्व ज्ञाता के अनुभव या उसकी चेतना पर निर्भर करता है।

Scanned with CamScanner

(3) प्रत्ययवादी विचारक: अपने मत की पुष्टि हेतु तीसरा तर्क यह देते हैं कि यदि हम मान लें कि ज्ञेय पदार्थ ज्ञाता से बिल्कुल स्वतन्त्र पदार्थ है तो उसके लिए कोई प्रमाण नहीं है। किन्तु कोई स्वतन्त्र पदार्थ है यह तभी प्रमाणित हो सकता है जबकि उनका ज्ञान हो। और ज्योंहि उनका ज्ञान होगा वे ज्ञाता से सम्बन्धित हो जायेंगे। अत: उनकी स्वतन्त्रता नष्ट हो जायेगी। अत: अत: अगर कोई वस्तु स्वतन्त्र है भी तो वह अज्ञात और अचिंत्य है, अर्थात् असिद्ध है।

(4) प्रत्ययवादी विचारकों द्वारा अपने मत की पुष्टि हेतु चौथा तर्क यह दिया जाता है कि अगर हम मानते हैं कि कोई पदार्थ ज्ञाता से स्वतन्त्र है तो फिर कभी भी वह उससे क्यों सम्बन्धित होता है? इस तरह की कठिनाई ज्ञेय को स्वतन्त्र मानने से होती है किन्तु जो पदार्थ स्वभावत: ज्ञाता से असम्बद्ध है उसका उससे सम्बन्धित होना अचिंत्य है। अत: यदि मान लिया जाय कि सभी पदार्थ ज्ञाता से सम्बन्धित या उस पर निर्भर है तो ऐसी कठिनाई से बचा जा सकता है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि प्रत्ययवादी विचारक अपने मत की पुष्टि हेतु कई तर्क देते हैं।

भारतीय ज्ञान-मीमांसीय प्रत्ययवादी विचारक के रूप में बौद्ध दर्शन के योगाचार सम्प्रदाय के विचारक आते हैं। इनके सिद्धान्त को विज्ञानवाद भी कहते हैं क्योंकि ये विज्ञान या चैतन्य मात्र को सत्य मानते हैं। इनके अनुसार ज्ञाता या मन से अलग किसी पदार्थ का अस्तित्व नहीं है, अत: मन के बाहर कुछ भी नहीं है मन के बाहर किसी पदार्थ को स्वीकार करने पर उसका प्रत्यक्ष असम्भव हो जाता है क्योंकि वह पदार्थ या तो परमाणुओं की तरह निरवयव होगा या सावयव। परमाणु की तरह होने पर उसका प्रत्यक्ष नहीं होगा क्योंकि परमाणु अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं तथा सावयव होने पर उसके विभिन्न अवयवों का अलग-अलग प्रत्यक्ष होगा। अत: विज्ञानवाद का मानना है कि सब कुछ मन पर अवलम्बित है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ज्ञान-मीमांसीय

प्रत्ययवादी विचारक अपने मत की पुष्टि करते हैं।

किन्तु प्रत्ययवादी सिद्धान्त बौद्धिक एवं दार्शनिक स्तर पर चाहे जितना भी महत्वपूर्ण रहा हो, परन्तु साधारण व्यवहारिक स्तर पर यह सिद्धान्त बहुत मान्य प्रतीत नहीं होता अतः कई बिन्दुओं पर इसकी आलोचना की गई है। वस्तुवादी विचारकों ने इसकी कटु आलोचना की है। उनका कहना है कि जिस पानी से हम अपनी आंख धुमाते हैं या जिस मेज पर बैठकर लिख रहे हैं इनका अस्तित्व अपने मन पर निर्भर कैसे माना जा सकता है। फिर भारतीय दर्शन में भी शंकराचार्य ने योगाचार मत की कटु आलोचना की है। यहाँ हम कुछ आलोचनाओं पर प्रकाश डालेंगे।

(1) आलोचनों का कहना है कि प्रत्ययवादी विचारक वस्तुओं का ज्ञात होना तथा अस्तित्ववान होना में अन्तर नहीं मानते जो उनकी भारी भूल है। यह ठीक है कि वस्तुएँ ज्ञात होती है तो ज्ञाता से सम्बन्धित होती हैं किन्तु इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि उनका अस्तित्व भी तभी है जब वे ज्ञाता से सम्बन्धित होती है। पाश्चात्य दार्शनिक 'पेरी' इस तरह के दोष को अहं केन्द्रित विषयावस्था के दोष (Fallacy of Ego-centric Predicament) की संज्ञा देते हैं। अपनी बातों को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं कि प्रत्येक मनुष्य किसी भी वस्तु का ज्ञान अपनी चेतना से सम्बद्ध कर ही प्राप्त करता है, किन्तु प्रत्ययवादी दार्शनिक इससे एक दोषपूर्ण निष्कर्ष निकाल लेते हैं कि ज्ञाता से सम्बन्धित हुए बिना वस्तु का अस्तित्व ही नहीं है।

(2) 'पेरी' के अनुसार प्रत्ययवादी दार्शनिक के विचार में एक दूसरा दोष भी है जिसे वे 'आदि-विधेय-दोष' (Fallacy of initial predication) कहते हैं। यानि किसी के साथ प्रथम परिचय जिस रूप या गुण से हो उस रूप या गुण को अगर हम उसका सार लक्षण मान लें तो ऐसी स्थिति में हम इस दोष के भागी होते हैं। प्रत्ययवादी भी यही भूल करते हैं क्योंकि वे वस्तु का सर्वप्रथम परिचय (या ज्ञान) चेतना के रूप में पाकर चेतना के साथ सम्बद्ध होना वस्तु का सार गुण मान-

Scanned with CamScanner

लेते हैं तथा कहते हैं कि इसके बिना उसका अस्तित्व ही नहीं होगा।

(3) पाश्चात्य विचारक 'मूर' (G.E. Moore) का कहना है कि ज्ञान के विषय को ज्ञान या ज्ञाता से स्वतन्त्र या अलग मानना अनिवार्य है अन्यथा विभिन्न विषयों के ज्ञान में अन्तर करना असम्भव हो जायेगा। संवेदन का विश्लेषण कर वे इसके दो अंग (1) संवेदन मात्र या आन्तरिक अनुभूति और (2) उसका विषय की चर्चा करते हुए कहते हैं कि दो संवेदनों जैसे नीले और पीले के संवेदनों में अन्तर रहता है। यह अन्तर उक्त दो अंगों में अन्तर होने से ही हो सकता है किन्तु आन्तरिक अनुभूति दोनों में एक सी है। अतः उसका अन्तर अवश्य ही विषय नीला और पीला में अन्तर होने के कारण है। अतः स्पष्ट है कि संवेदन के विषय संवेदन अर्थात् अनुभूति से स्वतन्त्र हैं और संवेदन या अनुभूति से स्वतन्त्र होने का मतलब है अनुभवकर्ता या ज्ञाता से स्वतन्त्र होना। अतः प्रत्ययवाद का यह मानना कि ज्ञान का विषय ज्ञाता पर आश्रित है, सत्य नहीं है।

(4) पुनः 'मूर' ने यह भी आपत्ति जताया है कि चूंकि प्रत्ययवाद सभी पदार्थों को ज्ञाता पर आश्रित मानता है इसलिए ज्ञाता या आत्मा को भी स्वतन्त्र अस्तित्व वाला नहीं माना जा सकता, क्योंकि वह भी ज्ञान का विषय है। इसलिए उसे भी औरों की तरह किसी के ज्ञान पर आश्रित होना पड़ेगा। किन्तु आत्मा के स्वतन्त्र अस्तित्व के छिन जाने पर प्रत्ययवाद का आधार ही नष्ट हो जाता है, क्योंकि प्रत्ययवाद के अनुसार आत्मा बिल्कुल स्वतन्त्र है। यहाँ 'मूर' का कहना है कि अगर सब पदार्थों को ज्ञानाश्रित माना जाय तो आत्मा को भी वैसा ही मानना चाहिए, अन्यथा असंगति होगी।

(5) पाश्चात्य विचारक ड्रेक (Drake) ने प्रत्ययवाद के विरुद्ध आपत्ति करते हुए इसे साधारण अनुभव के द्वारा अप्रमाणित सिद्ध किया है। उनका कहना है कि अनुभूतियों पर हमारा कोई अधिकार नहीं, अनुभूतियों में एक प्रकार की विवशता रहती है किन्तु प्रत्ययवाद

Scanned with CamScanner

का कहना है कि सब ज्ञाता पर ही निर्भर है तो क्यों नहीं हमारी अनुभूतियों का घटना-क्रम हमारे वश में है। इसके लिए प्रत्ययवाद के पास कोई व्याख्या नहीं है। अतः ड्रेक का कहना है कि अनुभूतियों की विवशता से ही यह प्रमाणित होता है कि ज्ञात वस्तुएँ ज्ञाता पर निर्भर नहीं है।

(6) पुनः ड्रेक ने यह भी आपत्ति की है कि प्रत्ययवाद को मानने से किसी व्यक्ति के लिए उसके मन और मन की दशाओं के अतिरिक्त कोई अन्य पदार्थ सत्य नहीं है। जिससे प्रत्ययवाद का परिणाम सर्वाहंवाद हो जाता है। किन्तु सर्वाहंवाद सिद्धान्त को नहीं माना जा सकता क्योंकि बाहर की दुनियाँ में हमारा विश्वास है उसके अनुरूप हम कार्य करते तथा सफलता पाते हैं। अतः बाहरी दुनियाँ को असत्य मानने से हमारा दैनिक जीवन असम्भव हो जायेगा।

उपरोक्त सारी बातों से स्पष्ट है कि ज्ञान-शास्त्रीय प्रत्ययवाद साधारण विश्वास के अनुरूप नहीं होने के कारण एक यथेष्ट और समुचित सिद्धान्त सिद्ध नहीं होता फिर भी दार्शनिक विचारकों के लिए यह अहं भूमिका निभाता है।

x ———————— x